HIN3B14B- Sociolinguistique et histoire du hindi-2013-01-31

हिन्दी भाषा – इतिहास और क्षेत्र

भाषाविज्ञान में 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग एक अर्थ में होता है तो साहित्य में दूसरे अर्थ में। आजकल बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश के उत्तरी भाग, राजस्थान, हिमालय के पहाड़ी प्रान्तों तथा पंजाब की साहित्यिक भाषा को हिन्दी माना जाता है। संरचना की दृष्टि से हिन्दी की दो उपशाखाएँ मानी गयी हैं - पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी।

'हिन्दी' शब्द का प्रयोग कैसे शुरु हुआ? इस विषय में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। प्रयोग तथा रूप की दृष्टि से 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' शब्द फारसी का है जिसमें इसका अर्थ होता है—'हिन्द का'। फारसी ग्रंथों में इस शब्द का प्रयोग दो अर्थों में हुआ – (1) 'हिन्द देश के रहने वाले' तथा (2) 'उनकी भाषा'।

भाषा-विज्ञान के अनुसार संस्कृत की 'स' ध्वनि फारसी में 'ह' के रूप में पायी जाती है। इस तरह संस्कृत के 'सिन्ध' और 'सिन्धी' शब्द फारसी में 'हिन्द' और 'हिन्दी' हो जाते हैं।[1] हिन्दू शब्द की उत्पत्ति भी इसी प्रकार हुई मानी जाती है—'हिन्दू' यानी 'हिन्द का रहने वाला'।

यहाँ एक सवाल। अगर सिर्फ 'सिन्धु प्रदेश' ही सारे भारत का प्रतीक नहीं है, तो फिर सारे भारतवासियों के लिए 'हिन्दी' तथा 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग क्यों हुआ। इसका कारण यह माना जाता है कि मुसलमानों का पहला आक्रमण सिन्ध पर ही हुआ था। अतः वे लोग सिन्ध इलाके में रहने वालों को 'हिन्दी' अथवा 'हिन्दू' कहने लगे। बाद में जब मुसलमान भारत में फैलने लगे तो यह शब्द भी व्यापक बन गया और अन्त में सारे भारतवासियों के लिए प्रयुक्त होने लगा।

यहाँ हमें 'हिन्दी' और 'हिन्दू' शब्द के बीच के अन्तर को भी समझ लेना चाहिए। 'हिन्दी' शब्द का प्रयोग किसी भी भारतवासी के लिए हो सकता है, परन्तु 'हिन्दू' शब्द एक विशिष्ट धर्म के मानने वालों के लिए प्रयुक्त होता है।

एक सवाल और। अगर शुरु में 'हिन्दी' शब्द का अर्थ सिन्धु देश की कोई भी भाषा था तो फिर इसका अर्थ सिर्फ 'मध्यदेश की भाषा' क्यों हुआ? ज़ाहिर है कि सिन्ध की भाषा हिन्दी कभी नहीं रही। सिन्धी भाषा हिन्दी भाषा से अलग एक स्वतन्त्र भाषा है। पहला कारण यह है कि 'मध्यदेश' (यानी आगरा और दिल्ली) ही मुसलमानों की सत्ता का केन्द्र रहा। यहाँ की भाषा को ही हमेशा राष्ट्रभाषा माना गया। इसलिए यहाँ की भाषा को 'हिन्दी' कहा गया। दूसरा कारण यह हो सकता है कि उत्तर की इस भाषा का प्रसार सिन्ध से लेकर बिहार तक किसी-न-किसी रूप में हर जगह पाया जाता था। यही भाषा इस इलाके की प्रमुख भाषा रही है। इसी कारण इस भाषा का नाम हिन्दी पड़ा।

हिन्दी का शाब्दिक अर्थ —"हिन्दी शब्द का प्रयोग हिन्द या भारत में बोली जाने वाली किसी आर्य या अनार्य भाषा के लिए हो सकता है, किन्तु व्यवहार में हिन्दी उस बड़े भू-भाग की भाषा समझी जाती है, जिसकी सीमा पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर-पश्चिम में अम्बाला, उत्तर में शिमला से लेकर नेपाल के पूर्वी छोर तक के पहाड़ी प्रदेश, पूरब में भागलपुर, दक्षिण-पूरब में रायपुर तथा दक्षिण-पश्चिम में खण्डवा तक पहुँचती है।...इस अर्थ में बिहारी (भोजपुरी, मगही और मैथिली) राजस्थानी (मारवाड़ी, मेवाती आदि), पूर्वी हिन्दी (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, पहाड़ी आदि) सभी हिन्दी की भाषाएँ मानी जा सकती हैं।...यह हिन्दी का प्रचलित अर्थ है।" (डॉ. श्यामसुन्दर दास)

हिन्दी के कई नाम

हिन्दवी— शुरु में हिन्दी को ही कुछ पुराने लेखकों ने 'हिन्दवी' नाम से पुकारा। मुंशी इंशाअल्ला खाँ ने इसी 'हिन्दवी' में *रानी केतकी की कहानी* लिखी। उनकी कोशिश थी कि इस भाषा में विदेशी भाषाओं या संस्कृत शब्दों का प्रयोग न हो। इस प्रकार से यह बिल्कुल शुद्ध शहरी बोली मानी जा सकती है; वह भी बोलचाल की, साहित्य की नहीं। दक्षिणी हिन्दी के अनेक प्रारम्भिक लेखकों ने भी इस भाषा के लिए 'हिन्दवी' शब्द का ही प्रयोग किया है। अमीर खुसरो ने भी इसे 'हिन्दवी' कहा है।

खड़ी बोली—खड़ी बोली मूल रूप से उत्तर प्रदेश के रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, सहारनपुर, देहरादून, अम्बाला तथा पटियाला रियासत के पूर्वी भागों की बोली है। इसमें अरबी-फारसी के शब्दों का खूब प्रयोग होता है, परन्तु तद्भव या अर्द्ध तत्सम रूप में ही। यह शौरसैनी अपभ्रंश से निकली है। इस पर पंजाबी का भी कुछ प्रभाव पड़ा है। मुसलमानों

[1] यह सिद्धान्त अब अमान्य सिद्ध हो चुका है, क्योंकि संस्कृत का 'स' फारसी में जाने पर हमेशा 'ह' में नहीं बदलता। इसके कई अपवाद मिलते हैं।

ने इसे ही 'रेखता' कहा। 'खड़ी बोली' शब्द का सबसे पहले प्रयोग लल्लूजीलाल और सदल मिश्र के लेखों में मिलता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'खड़ी बोली' को परदेशी भाषा कहा, हालाँकि उन्होंने अपना पूरा गद्य-साहित्य इसी में लिखा था।

उच्च अथवा **नागरी हिन्दी**—खड़ी बोली का साहित्यिक रूप ही उच्च अथवा 'नागरी हिन्दी' कहलाता है। इसमें संस्कृत के शब्दों का ज़्यादा इस्तेमाल होता है। पढ़े-लिखे लोग इसी का उपयोग करते हैं। यहाँ इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि शुरु में खड़ी बोली के इस रूप को साहित्यिक महत्त्व प्राप्त नहीं था। परन्तु बाद में राजनैतिक कारणों से हिन्दू लोग संस्कृत की ओर झुके और उन्होंने खड़ी बोली को संस्कृत के शब्दों से भर दिया। आज यही भाषा भारत की राजभाषा है।

उर्दू— खड़ी बोली जब अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों तथा काव्य-पद्धतियों को अपना लेती है तो उर्दू कहलाती है। कभी-कभी इसकी वाक्य-रचना पर भी फारसी का प्रभाव रहता है। यह ज़्यादातर भारतीय मुसलमानों तथा फारसी प्रेमी हिन्दुओं की साहित्यिक भाषा है। इसके भी दो रूप हैं— (1) दिल्ली-लखनऊ की अरबी-फारसी के शब्दों से भरी कठिन उर्दू (2) दक्षिण यानी हैदराबाद की सरल उर्दू जिसे दक्खिनी भी कहते हैं। इस प्रकार भाषा-विज्ञान की दृष्टि से उर्दू कोई अलग भाषा न होकर खड़ी बोली का ही एक साहित्यिक रूप है। खड़ी बोली की ही तरह उर्दू के भी दो रूप हैं (1) बोलचाल की उर्दू (2) साहित्य की उर्दू।

रेखता—उर्दू के ही एक पुराने रूप को 'रेखता' कहा गया। मुगल काल के उत्तरार्द्ध में दिल्ली और उसके बाद लखनऊ के शाही दरबारों में उर्दू के कवियों का एक अलग समुदाय बन गया, जिसने उर्दू के बाजारू रूप को सुधार कर उसे साहित्यिक रूप दिया। इसमें फारसी भाषा के शब्दों का अधिक मिश्रण था। इसी कारण कविता की इस उर्दू को 'रेखता' (यानी 'मिश्रित') कहा गया। 'रेखता' का एक और अर्थ भी माना जाता है – 'बिखरी हुई'। यह शुद्ध उर्दू का बिगड़ा हुआ रूप था, अतः इसे रेखता कहा गया। 'रेखता' शब्द में 'हीनता' की भावना है।

दक्खिनी—डॉक्टर बाबूराम सक्सेना के अनुसार 'दक्खिनी' आधुनिक खड़ीबोली का आरंभिक रूप है। साहित्य में इसका प्रयोग सबसे पहले दक्षिण में हुआ। दिल्ली में खड़ीबोली जन-सम्पर्क की भाषा तो थी, लेकिन उसका वहाँ कोई साहित्यिक मूल्य नहीं था। दक्षिण में यही खड़ी बोली मुसलमानी शासकों की भाषा होने के कारण सम्माननीय थी। ये सभी शासक दिल्ली से ही दक्षिण गये थे और तुर्की होने के कारण फारसी की जगह खड़ी बोली पसन्द करते थे। मुगल सेना के सैनिक भी दिल्ली के इलाके से गए थे जो पढ़े-लिखे नहीं थे। ये भी खड़ी बोली बोलते थे। इसलिए दक्षिण में साहित्य में इसका प्रयोग होने लगा। दक्षिण की इस भाषा के दो रूप मिलते हैं। एक रूप तो वह है जो मुगल शासन के अंतिम काल में बली औरंगाबादी से पहले का है। इसमें अरबी-फारसी के शब्द बहुत कम थे। दूसरा रूप वह है जब बली दिल्ली आये और वहाँ से प्रभावित होकर दक्षिण लौटे। तभी से इस दक्खिनी हिन्दी में अरबी-फारसी का प्रभाव दिखाई देने लगा।

हिन्दुस्तानी— हिन्दुस्तानी भी खड़ी बोली का एक रूप है। यह हिन्दी और उर्दू की अपेक्षा खड़ीबोली के ज़्यादा पास है, क्योंकि इस पर न तो अरबी-फारसी का और न ही संस्कृत का सीधा प्रभाव है। यह आम लोगों की बोलचाल की भाषा है। दक्षिण के द्रविड़ भाषा-भाषी क्षेत्रों को छोड़कर 'हिन्दुस्तानी' को भारत में लगभग सभी जगह समझा जाता है। 'हिन्दुस्तानी' नाम यूरोपीय विद्वानों द्वारा दिया गया। महात्मा गाँधी ने भी हिन्दी-उर्दू के मिले-जुले तथा सरल रूप को 'हिन्दुस्तानी' कहा था। इसके लिए उन्होंने प्रेमचन्द की भाषा को आदर्श माना था। राष्ट्रभाषा के नाम से इसी भाषा का प्रचार हुआ था। हिन्दी का साधारण साहित्य (यानी किस्से, गजलें आदि) इसी में लिखा जाता है। इन्शाअल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' तथा हरिऔधजी का *ठेठ हिन्दी का ठाठ* और *बोलचाल* आदि पुस्तकों में इसी भाषा का रूप मिलता है। डॉक्टर ग्रियर्सन ने खड़ीबोली के इस रूप को 'वर्नाक्यूलर हिन्दुस्तानी' नाम दिया था।

इसप्रकार भाषाविज्ञान की दृष्टि से भारत के मध्यदेश की बोलियों के मिले-जुले रूप को 'हिन्दी' कहा जाता है। इस सम्पूर्ण भाषा-समूह के दो वर्ग हैं—पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी। पश्चिमी हिन्दी के अन्तर्गत खड़ीबोली, बाँगरू, ब्रज, कन्नौजी तथा बुन्देली मानी गई हैं तथा पूर्वी हिन्दी में अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी मानी गई हैं। कुछ लोग भोजपुरी को भी इसी वर्ग के अन्तर्गत मानते हैं और कुछ उसे बिहारी भाषा-समूह से सम्बन्धित मानते हैं। इस प्रकार यदि भोजपुरी को भी इस समुदाय में सम्मिलित कर लिया जाय तो हिन्दी की कुल मिलाकर नौ बोलियाँ बनती हैं—खड़ीबोली, बाँगरू, ब्रभाषा, कन्नौजी, बुन्देली, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी और भोजपुरी। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

(1) खड़ीबोली—खड़ीबोली को 'सरहिन्दी' भी कहा जाता है। दिल्ली प्राचीन काल से मुस्लिम शासन का केन्द्र रही है। इस कारण इस बोली में अरबी, फारसी, तुर्की आदि अनेक भाषाओं के शब्द घुल-मिल गए हैं। लेकिन इन विदेशी शब्दों का प्रयोग तत्सम रूप में न होकर अर्द्ध तत्सम या तद्भव रूप में ही हुआ। पहले अपने मूल रूप में यह गँवारू बोली थी लेकिन बाद में उसका रूप मानक होता गया। हिन्दी में गद्य खड़ीबोली के उस रूप में लिखा गया जो शासकों तथा जनता की सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित हुआ। इस बोली के दो रूप हो गए—उर्दू (अरबी, फारसी से प्रभावित) तथा हिन्दी (संस्कृत तथा प्राचीन

हिन्दी से प्रभावित)। शुद्ध रूप में खड़ीबोली के मूल रूप के बोलने वालों की संख्या लगभग एक करोड़ है। यही एक करोड़ की जनसंख्या वाली बोली आज सत्तर करोड़ भारतीयों की राजभाषा बनी हुई है। अपने मूल रूप में यह रामपुर रियासत, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून, अम्बाला तथा पटियाला रियासत के पूर्वी भाग में बोली जाती है।

उदाहरण—खड़ीबोली के मूल रूप में भी भिन्नता है। इसके दो रूप माने जाते हैं—बिजनौर जिले की खड़ीबोली और मेरठ जिले की खड़ीबोली।

बिजनौर—"कोई बादसा था। साब उसके दो राण्या थीं। एक के तो दो लड़के थे और एक के एक। वो एक रोज अपनी रान्नी से केने लगा मेरे समान कोई बादसा है बी?"

मेरठ—"एक दिन अकबर बादसा ने बीरबल तें पुच्छा, ओ बीरबल तू हमें बड़द का दूध ला दे नहीं तेरी खाल कढ़वाई जागी। बीरबल कूँ बहोत रंज हुआ और हुन्तर आण के अपने घरूँ पड़ रहा।"

(2) बागरूँ— यह भाषा 'जाटू' या 'हरियाणवी' के नाम से भी जानी जाती है। इसका क्षेत्र दिल्ली, करनाल, रोहतक, हिसार, पटियाला, नाभा तथा झींद रियासत है। यह राजस्थानी और पंजाबी मिश्रित खड़ीबोली ही है। इस प्रकार इसे हम हिन्दी की पश्चिमी सरहदी बोली कह सकते हैं। वास्तव में यह खड़ीबोली का ही एक उपविभाग है।

उदाहरण—"एक बांमण था अर एक बांमणी थी। बांमण चून मैन कै लि आया करदा। बांमणी कैहण लाग्गी एस नगरी में राज्जा भोज सै। यूँ सलोक काहा कै बांमणां ने एक टका सिओने का दे सै।"

(3) ब्रजभाषा—मध्यकाल में अपने समृद्ध साहित्य के कारण ब्रजभाषा उत्तर भारत की प्रधान साहित्यिक भाषा मानी जाने लगी थी। आजकल इसमें बहुत कम साहित्य लिखा जाता है। आज इसका रूप केवल हिन्दी की एक बोली के रूप में ही रह गया है। विशुद्ध रूप में यह अब मथुरा, आगरा, अलीगढ़ तथा धौलपुर में बोली जाती है। गुड़गाँव, भरतपुर, करौली, ग्वालियर के पश्चिमोत्तर भाग में इसमें बुन्देली तथा राजस्थानी की झलक आ जाती है। बुलन्दशहर, बरेली की तरफ इसमें खड़ीबोली का प्रभाव लक्षित होने लगता है। एटा, मैनपुरी, इटावा की ओर कन्नौजीपन की लटक आ जाती है। ब्रजभाषा के बोलने वालों की संख्या भी लगभग एक करोड़ होगी।

उदाहरण—इसके भी दो रूप माने गए हैं। मथुरा जी के चौबों की बोली और एटा की बोली।

मथुरा—"एक मथुरा जी के चौबे हे, जो डिल्ली सैहर कौं चले। तौ पैले रेल तौ ही नईं पैदल रस्ता हो। तो एक डिल्ली को बनिया हो सो माल लै आयौ बेचवे कौं।"

एटा—"एक ठाकुर हो। बा नै एक कोरिया कूँ बेगार में पकरो और अपनी घुड़िया के संग-संग बाइ लिबाई के अपनी ससुराल कूँ चलो।"

(4) कन्नौजी— इसका क्षेत्र ब्रज और अवधी के बीच में है। यह प्राचीन कन्नौज राज्य की बोली है। वास्तव में यह ब्रजभाषा का ही एक उपरूप है जिसका केन्द्र फर्रुखाबाद है। यह उत्तर में हरदोई, शाहजहाँपुर तथा पीलीभीत तक दक्षिण में इटावा तथा कानपुर के दक्षिण भाग में बोली जाती है। इस प्रदेश के सभी कवियों ने ब्रजभाषा में काव्य-रचना की है, इसी से इसे ब्रजभाषा का एक रूप माना जाता है। इसके बोलने वाले लगभग साठ सत्तर लाख हैं।

उदाहरण—इसके भी दो रूप हैं—कन्नौजी और कानपुरी।

कन्नौजी—"एक दिन का भयौ कि हम अपने दुआरे ठाढ़े रहे और एक अँधरो फकीर सड़क पर भीख माँग रहो हतो कि इत्तेह में एक मोटर निकसी।"

कानपुरी—"याकै हते राजा विकरमाजीत। तोन, के याक रानी रहै। उइ राजा और रानी माँ बाजी लागी कि याक चिरैया बोलिति रहै।"

(5) बुन्देली—यह बुन्दलखण्ड की भाषा है। इसका क्षेत्र ब्रजभाषा के दक्षिण में है। शुद्ध रूप में यह झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, ओरछा, सागर, नृसिंहपुर, शिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है। इसके कई मिश्रित रूप दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट तथा छिंदवाड़ा के कुछ भागों में पाये जाते हैं। मध्यकाल में यह प्रदेश साहित्य का प्रसिद्ध केन्द्र रहा था पर यहाँ के कवियों ने कविता ब्रजभाषा में ही की थी। बुन्देली और ब्रजभाषा बहुत मिलती-जुलती हैं।

उदाहरण—इसके भी दो रूप हैं—झाँसी की बोली और ओरछा की बोली।

झाँसी—"एक गाँव में माते कि छारि के ढिगाँ एक गरीब किसान की खेती ठाढ़ी तो ताखों लख के माते बोलो कि काये रे, हमारी खेती अपने ढोरन से चरा लयी।"

ओरछा—"एक बेरे एक हाथी मर गवो तो। जब ऊ कौ जी जमराज कै गवो तो उन नै पूँछी कै तै इतनो बड़ो है और आदमी तो इतनो हलको, ऊ के बसे में काये रात?"

(6) अवधी—उत्तर प्रदेश में हरदोई जिले को छोड़कर शेष सम्पूर्ण अवध की बोली अवधी कहलाती है। हिन्दी के प्रसिद्ध रामभक्त कवि तुलसीदास ने अपना प्रसिद्ध 'रामचरितमानस' साहित्यिक अवधी में ही लिखा था। अवधी का ठेठ रूप जायसी के महाकाव्य 'पद्मावत' में मिल जाता है। हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में अवधी का खूब प्रचार हुआ था, परन्तु आगे चलकर यह ब्रजभाषा का मुकाबला न कर पायी।

उदाहरण—"एक अहीर के घरे माँ चार मनई लरिका सास, पतोहू और बाप रहत रहें। मुला चारयू बहिर रहें। बटौना एक दिन खेत मां हर जोतत रहा और ओही से दुहई राही चला आवत रहें।"

(7) बघेली—अवधी के दक्षिण में बघेली का क्षेत्र है। यह मध्य प्रान्त के दमोह, जबलपुर तथा बालाघाट तक बोली जाती है। यह सारा क्षेत्र 'बघेलखंड' कहलाता है। इसका केन्द्र रीवाँ राज्य माना जाता है। जिस प्रकार बुन्देलखण्ड के कवियों ने ब्रजभाषा को अपना रखा था, उसी प्रकार रीवाँ राज्य के राज्याश्रित कवियों ने अवधी को ही साहित्यिक भाषा माना था। वे अवधी में ही कविता करते थे। नई खोज से यह सिद्ध हो चुका है कि बघेली कोई स्वतंत्र बोली न होकर अवधी का ही एक उपरूप है।

उदाहरण—"कोई देस में कोई बैपारी एक भारी तालूकाकेर मालिक बन कर ओ में सुख चैन से रहत रहैं। ओकार तीन ठून मीत रहैं। ओ में से दुह झनला खूब मोह करत रहैं।"

(8) छत्तीसगढ़ी— इसे लरिया या ख्वाही भी कहते हैं। इसके कई रूप हैं। मध्यप्रदेश में रायपुर और विलासपुर के जिलों तथा काँकर, नन्दगाँव, कोरिया आदि राज्यों में इसके भिन्न-भिन्न रूप बोले जाते हैं। इस भाषा में प्राचीन साहित्य बिल्कुल नहीं है। कुछ नई बाजारू किताबें अवश्य छपी हैं। इधर इसमें कुछ छोटे उपन्यास भी छपे थे, परन्तु प्रचार न पा सके।

उदाहरण— "एक ठन गाँव में केवट और केवटिन रहिस। तेकर एक ठन लइका रहिस। केवट महाजन के रुपया लागत रहिस। तब एक दिन साब रुपया माँगे बर आइस।"

(9) भोजपुरी — भोजपुरी को डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी बोलियों के अन्तर्गत माना है। यह बनारस, मिर्जापुर, जौनपुर, बलिया, गोरखपुर, बस्ती, आजमगढ़, शाहाबाद, चम्पारन तथा छोटा नागपुर तक फैली हुई है। इसके बोलने वाले लगभग 3 करोड़ हैं। इसमें साहित्य कुछ भी नहीं है। काशी में रहने वाले लेखक प्राचीन काल में ब्रज तथा अवधी में तथा आजकल खड़ीबोली में लिखते रहे हैं। भाषा सम्बन्धी कुछ समानता को छोड़कर शेष सब बातों में भोजपुरी प्रदेश बिहार की अपेक्षा हिन्दी प्रदेश के ज़्यादा पास रहा है। हिन्दी भाषियों को इस बोली को समझने में ख़ास दिक़्क़त नहीं होती। इस बोली का नमूना निम्नलिखित है-

उदाहरण— "एक जनी ससुरारि कर गइलै। उहाँ राति के दीआ बरत रहे। इकब्बो दिया बरत देखले नाहीं रहलैं। अपने मन में कहलें होई है अँजोरिया के बच्चा।"